International Journal of Information Movement Vol.I Issue II (June 2016)
www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 71-75

दिल्ली सल्तनत से पहले हिन्दू समाज में महिलाओं की स्थिति

डॉ. परमजीत कौर
प्रवक्ता, इतिहास विभाग,
केएमआरडी जैन कॉलेज फॉर वूमैन, मलेरकोटला

पुरायाषाण काल में महिलाओं की स्थिति के बारे में कोई ज्यादा जानकारी नहीं मिलती है। लेकिन ऋग्वेद से महिलाओं की स्थिति के बारे में जानकारी मिलनी शुरू हो जाती है। वैदिक काल में हिन्दू समाज में स्त्रियों को सम्मानित स्थान प्राप्त था। प्राचीनकाल में नारी को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था, शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि पत्नी पुरुष की आत्मा का आधा भाग है और जब तक वह उसे प्राप्त नहीं कर लेता तब तक वह अपने में अपूर्ण रहता है। इसी प्रकार महाभारत के आदिपर्व में भी लिखा गया है कि 'भार्या मनुष्य का आधा भाग है, भार्या श्रेष्ठ सखी है, भार्या ही धर्म, अर्थ तथा काम की मूल है। वस्तुतः प्राचीन काल में स्त्रियों को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जैसे शिक्षा, सम्पत्ति, राजनीति, सांस्कृतिक, आर्थिक, वैवाहिक आदि सभी में महत्त्वपूर्ण अधिकार प्राप्त थे। स्त्री को गृहिणी, माता एवं सहचरी के रूप में भी उच्च स्थान प्राप्त था। वह अपने प्रत्येक रूप में भी उच्च स्थान प्राप्त था। वह अपने प्रत्येक रूप में समाज के सामने एक आदर्श थी। स्त्री पुरुष की अर्द्धांगिनी मानी गई थी। मानव जीवन के सर्वोन्मुखी विकास में नारी की अहम् भूमिका रही थी।'[1]

नारी की स्थिति उसकी आर्थिक प्रगति राजनीतिक तथा उसके वैचारिक आदर्शों से निरन्तर प्रभावित रही। वह परिवार के लोगों को श्रद्धा, प्रेम में बांधे रखती थी। लेकिन यह स्थिति निरन्तर ऐसी नहीं रही। वैदिक काल के बाद महिलाओं की स्थिति में गिरावट आनी शुरू हो गई। उनको उनके अधिकारों से वंचित किया जाना आरम्भ हुआ और पुरुष के द्वारा उनका शोषण आरम्भ हो गया। इसमें धर्म के ठेकेदारों, स्मृतिकारों और रूढ़िवादी लोगों ने विशेष भूमिका निभाई।

मनु के अनुसार स्त्रियों को कभी भी स्वछंद रूप से नहीं रहना चाहिए। बचपन में लड़कियों को माता–पिता के संरक्षण में, युवावस्था में अपने पति के संरक्षण में तथा पति के मरने के बाद पुत्र के संरक्षण में रहना चाहिए।[2]

प्राचीन भारतीय समाज मुख्यतः पितृसत्तामक समाज था, जिसमें पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन में पुरुष का प्रभुत्व स्वाभाविक ही था। घर की बड़ी स्त्री, अपने पति के अधीन रहते हुए भी समस्त गृह प्रबन्ध की संचालिका होती थी। घर के सारे कार्य उसकी देख–रेख में तथा उसकी इच्छानुसार होते थे। नारी की भूमिका धार्मिक क्षेत्र में इतनी महत्त्वपूर्ण होती थी कि कोई भी यज्ञ, हवन, अनुष्ठान बिना नारी की उपस्थिति के पूर्ण नहीं माना जाता था। क्योंकि पत्नी, पति का आधा भाग मानी जाती थी। स्त्री माता के रूप में और ज्यादा सम्मान प्राप्त करती थी। महिलाओं को पुरुषों के समान शिक्षा, धर्म, राजनीति और सम्पत्ति के क्षेत्र में भी अधिकार प्राप्त थे।[3] शिक्षा के क्षेत्र में भी महिलाओं ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। जैसे ऋग्वेद की रचना में, जिनमें रोमांस, अपाला, उर्वशी, घोषा आदि विदुषी नारियों की भूमिका ममुख्य रही थी। युद्ध के क्षेत्र में भी अनेक वीरांगनाएँ अपने पति के साथ युद्ध भूमि में जाती थी, जिनमें वीरथला, मुद्गलानी वासनमुनि आदि ने महिलाओं को सेना में भर्ती किया और शत्रुओं को बुरी तरह पराजित किया। इसी प्रकार महिलाएँ राजनीतिक संस्थाओं में भाग लेती थी और उसे सम्पत्ति के क्षेत्र में तब अधिकार प्राप्त होता था जब वह अपने परिवार में इकलौती पुत्री होती या फिर ससुराल में जो अपने साथ दहेज रूप में लाती थी। वह उसकी सम्पत्ति स्त्रीधन समझी जाती थी। कन्याओं को काव्य, संगीत, नृत्य तथा अभिनय आदि। ललित कलाओं के अलावा उन सब की भी शिक्षा दी जाती

थी। जिनकी गृहस्थ जीवन में आवश्यकता होती थी, जैसे–कताई, बुनाई, सिलाई आदि। लड़कियों का शिक्षा के क्षेत्र में उतना ही महत्त्व था, जितना पुत्र का होता था। इस काल में पर्दा प्रथा, बाल विवाह आदि बुराइयाँ इस समय में प्रचलित नहीं थी। महिलाएँ पुरुषों के साथ स्वतन्त्रापूर्वक वाद–विवाद, संगोष्ठियों में भाग लेती थी। विधवाओं को पुनर्विवाह का अधिकार प्राप्त था। लेकिन समाज में बहुविवाह प्रथा अधिक प्रचलित नहीं थी। यह प्रथा सामान्यतः राजवर्ग तथा धनी लोगों में ही प्रचलित थी। युवतियों को अपने पति का चुनाव करने का अधिकार प्राप्त था।[4] इस प्रकार वैदिक काल में नारी की भूमिका सभी क्षेत्रों में सराहनीय रही थी।

वैदिक काल में महिलाओं को जो स्थान एवं आदर प्राप्त था वह उत्तर वैदिक काल में कम होता चला गया। इसमें समय के अनुसार धीरे–धीरे परिवर्तन आने शुरू हो गये व उसे उसके व्यक्तिगत अधिकारों से वंचित करना आरम्भ कर दिया गया। स्त्रियाँ अपने पतियों के साथ बैठकर यज्ञ क्रिया नहीं कर सकती थी। वह सम्पत्ति की उत्तराधिकारी नहीं बन सकती थी। पुरुष प्रधान समाज कके द्वारा अब शोषण आरम्भ हो गया। उत्तर वैदिक काल में बाल–विवाह का प्रचलन होने से महिलाओं की शिक्षा में बाधा पहुँची और शिक्षा कास्तर गिरा गया। उनके लिए वेदों का ज्ञान प्राप्त करना दुर्लभ हो गया। उत्तर वैदिक काल में महिलाओं को धार्मिक, सामाजिक अधिकारों से वंचित करने के और भी कई कारण थे, जैसे कर्मकाण्ड की जटिलता और पवित्रता की धारणा में वृद्धि हुई। जिसकी वजह से यह विश्वास किया जाने लगा कि मंत्रों के उच्चारण में तनित भी भूल हानिकारक हो सकती थी। इसलिए महिलाओं को उनके अध्ययन से अलग कर दिया गया। दूसरा कारण अंतर्जातीय विवाह ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। आर्यों ने अपने समुदाय में महिलाओं की कमी को पूरा करने के लिए अनार्यों से विवाह किया जो विधि–विधान से अपरिचित थी और इस कारण उनको धार्मिक, सामाजिक क्षेत्र से दूर रखना उचित समझा गया। विधवा विवाह पर रोक लगाई गई। विधवा को सिर्फ पुत्र प्राप्ति के लिए ही पुनः विवाह की आज्ञा मिली हुई थी।[5] बहु–विवाह का प्रचलन पहले से ज्यादा बढ़ा। सभा और समितियों में नारियों का जाना रोक दिया गया और उनकी स्वतन्त्रता में कमी होने लगी। मनु का कथन है कि नारियों के लिए स्वतन्त्रता ठीक नहीं है। ऐतरेय ब्राह्मण में पुत्र को स्वर्गतुल्य और कन्या को विपत्ति कहा गया है। अशिक्षा और अज्ञानता में समाज में महिलाओं की स्थिति को और भी ज्यादा दुर्बल बना दिया था। समाज में नारी की सामान्य स्थिति में कमी होने पर भी कुछ वर्षों में उनकी शिक्षा की ओर ध्यान दिया। स्त्रियों की शिक्षा प्रायः घर में ही होती थी। जिनमें गार्गी वाचक्नवी और मैत्रेयी आदि महिलाओं के नाम उल्लेखनीय है।[6]

उनको संगीत, नृत्य, शास्त्र आदि की शिक्षा भी प्रायः दी जाती थी। इस युग के साहित्य में जहाँ स्त्रियों की हीनता के उदाहरण अधिक पाते हैं, वही कुछ अंशों में उनकी महानता का भी उल्लेख पाते हैं।

तीसरी शताब्दी से लेकर 11वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक का समय धर्मशास्त्र काल कहलाता है। इस काल में 'विष्णु–संहिता', 'पराशर–संहिता' एवं 'याज्ञवतक्य संहिता' की रचना हुई जिसमें 'मनुस्मृति' को ही व्यवहार की कसौटी मानकर वैदिक नियमों को पूर्णतः तिलांजलि दे दी गई। उपनिषद् काल में स्त्रियों की स्थिति के संबंध में कुछ मिले–जिले मत प्राप्त होते हैं। यद्यपि उपनिषद् मैं नारी शब्द नहीं मिलता तथापि नारी तत्त्व उसमें सर्वत्र व्याप्त है। वह नारी तत्त्व सर्वशक्ति मान सर्वाधार परमात्मा की शक्ति है जो माय, प्रकृति, इच्छा, श्री आदि विभिन्न रूपों में वर्णित हुई है। स्त्रियाँ इस काल में सामाजिक एवं धार्मिक संकीर्ण विचारधारा का शिकार बनी। यज्ञों एवं धार्मिक कार्यों में पत्नी के स्थान पर पुरोहितों का महत्त्व बढ़ने लगा।[7] बाल–विवाह के सम्बन्ध में इतिहासकारों में अलग–अलग मत है। दहेज–प्रथा का प्रचलन आरम्भ हो गया था। सती प्रथा का प्रचलन नहीं था, विधाओं को पुनः विवाह की अनुमति थी। इस काल में स्त्रियाँ वैदिक काल की भाँति ही शिक्षा प्राप्त करती थी और आध्यात्मिक विषयों में, शास्त्रार्थों में भाग लेती थी।[8] पति की आज्ञा न मानने वाली पत्नी को केवल घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। बल्कि पति द्वारा बलपूर्वक आज्ञा मानने को उसे बाध्य किया जाता था।

सूत्र एवं महाकाव्य काल में आते–आते स्त्रियों की स्थिति और भी अधिक दयनीय हो गई। स्त्रियों पर कई प्रतिबंध लगा दिये गये, उनकी राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक ओर वैचारिक स्वतन्त्रताओं पर बंधन लगा दिये जन्म से मृत्यु तक उसे पुरुषों के नियंत्रण में रहने के लिए निर्देशित किया गया। कन्या, पत्नी, माता जैसी स्थितियों में वह पिता, पति, पुत्र के अधीन मानी गई।[9] परन्तु वहीं मैथिलीशरण पाण्डेय का मत है कि महाकाव्य में नारी की स्थिति बहुत अच्छी थी। स्त्रियों की स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता में कोई प्रतिबन्ध नहीं लगा था। सामाजिक, धार्मिक, सभी कार्यों में स्त्रियाँ भाग लेती थीं। रामायण काल में लड़कियों का जन्म शुभ नहीं माना जाता था, किन्तु दूसरी तरफ धार्मिक कार्यों में कुंवारी कन्याओं की उपस्थित शुभ मानी जाती थी।[10] कन्याओं को व्यवहारिक व नैतिक शिक्षा के साथ–साथ राजधर्म, युद्धों, संगीत, नृत्य, ललित कलाओं आदि की भी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था।[11] शिक्षा के प्रमुख संस्थान घर एवं परिवार ही थे, फिर भी एक दो स्त्रियाँ एवं कन्यायें आश्रमों में भी शिक्षा ग्रहण करने चली जाती थी।[12] ऐसा प्रतीत होता है कि रामायण काल में पर्दे का प्रचलन आरम्भ हो गया था, किन्तु साथ ही अनेक अवसरों जैसे–स्वयंवर, यज्ञ, युद्धों में स्त्रियाँ का प्रयोग नहीं करती थीं।[13] स्त्री धन देने की परम्परा उस समय भी प्रचलित थी। विधवाओं को सामान्यतः पुनः विवाह करने का अधिकार नहीं था, किन्तु फिर भी विधवाएँ समाज में सम्मानपूर्वक जीवन बिताती थी। पुनः विवाह की प्रथा न होने पर विधवाओं के लिए दो ही मार्ग होते थे, सती हो जाना या कठोर जीवन बिताना, रामायण काल में यह प्रथा कोई नई नहीं थी।

बहुविवाह की प्रथा, दासियों को उपहार के रूप में दिया जाना आदि ये सब सिद्ध करते हैं कि उस समय नारी को भोग–विलास की वस्तु मात्र माना जाता था।[14] परन्तु फिर भी यही कहा जा सकता है कि रामायण काल में स्त्रियों की स्थिति अच्छी और सुखद थी। उस समय तत्कालीन परिस्थितियों में नारी को कन्या, पत्नी और विधवा के रूप में समस्त सुविधाएँ एवं अधिकार प्राप्त थे।

महाभारत काल में जिन महिलाओं का वर्णन मिलता है, वे सब राजवंशों से सम्बन्धित है, जिससे साधारण नारियों की स्थिति के सम्बन्ध में ज्यादा जानकारी नहीं मिलती, किन्तु फिर भी यह स्पष्ट है कि स्त्री को गृहलक्ष्मी माना जाता था।[15] स्त्री एवं पुरुष को परस्पर पूरक तथा एक दूसरे के विकास में सहायक माना जाता था। कन्या फिर भी कन्या की दशा सन्तोषजनक थी। उन्हें घर पर ही धर्म, राजनीति व शास्त्र ज्ञान की शिक्षा प्रदान की जाती थी। इसके अलावा कन्याएँ गीत, नृत्य एवं वाद्य यन्त्रों में भी निपुण होती थी। रामायण काल की भाँति महाभारत काल में अस्त्र–शस्त्र धारण करके युद्ध भूमि में नहीं जाती थी। विधवाओं को काफी सम्मान प्राप्त था, किन्तु यह सम्मान मात्र राजवंश तक ही सीमित था, जनसाधारण में विधवाओं की दशा अच्छी न थी। सती प्रथा का प्रचलन होने लग गया था। सती होना न होना विधवा की इच्छा पर निर्भर था। महाभारत काल में सती प्रथा के कई उदाहरण मिलते हैं–जैसे पाण्डू के मरने के साथ उसकी पत्नी माद्री सती हो गई थी। वासुदेव की चारों पत्नियाँ उसके साथ सती हो गई थी। डॉ. अल्तेकर ने महाभारत काल में पर्दे का प्रचलन माना है।[16] बहु–विवाह का प्रचलन बढ़ने लगा था। महाभारत में कहा गया है कि पिता की सम्पत्ति में पुत्री का अधिकार पुत्र के समान होना चाहिए।

बौद्ध काल में प्राप्त सामग्री से यह पता चलता है कि स्त्रियों का बहुत ऊँचा स्थान नहीं था। स्त्री के सतीत्व को समाज में आदर्श माना जाता था। महात्मा बुद्ध पहले स्त्रियों के संघ प्रवेश के पक्ष में नहीं थे उन्होंने अपने शिष्य आनन्द के अनुरोध पर ही बाद में स्त्रियों को संघ प्रवेश की आज्ञा दी।[17] इस प्रकार की भिक्षुणी बनने वाली स्त्रियों को कठोर बढ़ावा बहुत मिला। वैश्याओं को भी समाज में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था। दास–प्रथा का प्रचलन था, अनेक घरों में दासियों के होने का उल्लेख मिलता है, क्योंकि उनको राज्य की ओर से सम्मान तथा आदर प्राप्त था।[18] महिलाओं की विद्या, धर्म और दर्शन के प्रति बहुत ज्यादा रुचि होती थी। महिलाओं ने अध्यापिकाओं के रूप में ख्याति प्राप्त कर ली थी। वे ब्रह्मचार्य का जीवनयापन करके ज्ञान प्राप्त करती थी खेमा उस युग की बहुत पढ़ी–लिखी महिला थी जिसकी विद्वत्ता की प्रसिद्धि दूर–दूर तक फैली हुई थी।[19]

अतः अन्त में कहा जा सकता है कि बौद्ध युग में स्त्रियों की स्थिति कोई विशेष ज्यादा अच्छी नहीं थी।

मौर्य काल में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति के पतन के अनेक कारण देखने को मिलते हैं। स्त्रियों की स्थिति सम्मानजनक नहीं रह पायी। उनकी स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता के स्थान पर परतन्त्रता और संकीर्णता का आरम्भ होने लगा था।[20] स्त्रियों का कार्य क्षेत्र घर तक सीमित रह गया तथा उनकी शिक्षा पर ध्यान कार्य क्षेत्र घर तक सीमित रह गया तथा उनकी शिक्षा पर ध्यान कम दिया जाने लगा। इस काल में स्त्रियाँ बेची जाने लगीं, स्त्रियाँ पर्दे में रहने लगी थी।[21] सती प्रथा का प्रचलन बढ़ता जा रहा था। मौर्य काल में बहु–विवाह अर्थात् बहु पत्नीत्व की प्रथा के कारण परिवार में पत्नी का स्थान बहुत निम्न हो गया था। परन्तु फिर भी स्त्रियों की स्थिति कुछ विषयों में सन्तोषजनक थी। विधवाओं को पुनःविवाह करने की आज्ञा थी, तलाक देने का अधिकार भी पति–पत्नी दोनों को था। विवाह अपनी जाति और अन्तर्जातीय दोनों का ही प्रचलन था। उस समय विवाह के लिए आयु निश्चित की हुई थी।[22]

गुप्त काल की जानकारी चीनी यात्री का ध्यान के विवरण, उससमय के शिलालेख और मुद्रा लेखों से उस काल में देश की स्थिति और जनता की अवस्था की जानकारी मिलती है। गुप्तकाल में नारी की स्थिति वैदिक काल की नारी के समान अच्छी नहीं होते हुए भी संतोषजनक थी। वह स्वतन्त्र रूप से शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार रखती थी। बाल–विवाह ने यद्यपि शिक्षा का द्वार अवरुद्ध कर दिया था। फिर भी स्त्री–शिक्षा की ओर ध्यान दिया जाता था।[23] बहु–विवाह की प्रथा इस समय जोरों पर बढ़ रही थी। गुप्त युग में शील, भट्टारीका आदि महिलायें कवियत्री और लेखिका के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी थी। परन्तु यह प्रथा कुलीन परिवारों व राजवंशों तक ही सीमित थी।

इस समय विधवाओं की दशा अच्छी नहीं थी, उन्हें निराशा और दुखों में जीवन बिताना पड़ता था।[24] पर्दा प्रथा का प्रचलन नहीं था, किन्तु कुलीन वर्ग की महिलाएँ बाहर जाते समय मुँह पर घुँघट डाल लेती थी। पुत्र के अभाव में पति की सम्पत्ति पर पत्नी का अधिकार होता था। दास प्रथा के प्रचलन के साथ–साथ सती प्रथा भी प्रचलित थी, विधवा विवाह बहुत कम होते थे। चन्द्रगुप्त द्वितीय की पत्नी ध्रुव देवी का विवाह इसी प्रकार हुआ था।[25] ह्यूनसांग जो चीनी यात्री था। वह हर्ष के समय में भारत आया। उसने अपने समय में पुनर्विवाह की प्रथा को नहीं पाया था। प्रशासन कार्यों में भी महिलाएँ भाग लेती थी। रानी प्रभावती गुप्त ने अपने पुत्र के संरक्षण के रूप में शासन कार्य किया था। लेकिन सती प्रथा का कोई धार्मिक महत्त्व नहीं था यह केवल राजवंशों तक ही सीमित थी।[26]

यद्यपि इस काल में स्त्रियों की दशा वैदिक काल तथा महाकाव्य काल की तरह अच्छी न होते हुए थी, परिवार में उनको अधिकार व समाज में नारी की सम्मानपूर्ण स्थिति को प्रकट करता था।

सातवीं शताब्दी के मध्य से बारहवीं शताब्दी के अन्त तक को युग को राजपूत, युग कहा गया है। राजपूत काल में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में काफी बदलाव आया और उनकी स्थिति में पहले से ज्यादा गिरावट आयी। इसके बावजूद उनकी स्थिति सम्मानजनक बनी हुई थी। राजपूत महिलाओं को स्वतन्त्रतापूर्वक स्वयंवर करने का अधिकार था।[27] राजपूत काल में मुसलमानों के अत्याचारों के कारण नारी की सुरक्षा को लेकर उसको घर में बंद रखने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी, फिर भी नारी ने पुरुषों को शूर–वीरता की प्रेरणा दी और महिलाओं ने सतीत्व की रक्षा के लिए आक्रमणकारियों के सामने आत्म–समर्पण करने की बजाए 'जौहर' की प्रथा को अपनाया। कुलीन वर्ग में बहु–विवाह की प्रथा का प्रचलन था। सती प्रथा दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। कुछ कबीलों में तो लड़कियों को जन्म के समय ही मार दिया जाता था। लड़कियों को विदेशी आक्रमणकारियों से बचाने के लिए उनका विवाह बचपन में ही कर दिया जाने लगा। विधवा–विवाह बहुत कम होते थे। विधवाओं को घृणा की दृष्टि से देखा जाने लगा था। उनके सिर के बाल काट दिये जाते थे।[28] बाल–विवाह के कारण लड़कियों की शिक्षा का पतन होता जा रहा था। परन्तु

शासक वर्ग की कन्याओं को चित्रकला संगीत, नृत्य के अलावा प्रशासनिक एवं सैनिक शिक्षा भी दी जाती थी। अलबेरूनी के विवरण के पता चलता है कि स्त्रियाँ शिक्षित होती थीं। लड़कियाँ संस्कृत लिखना, पढ़ना तथा समझना जानती थी, परन्तु साधारण स्त्रियों की पराधीनता राजपूत काल में निरन्तर बढ़ती ही गयी। इस काल में महिलाओं ने राजनीतिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। समाज में देवदासी तथा वेश्यावृत्ति का भी प्रचलन बढ़ा।

राजपूत काल में धीरे–धीरे महिलाओं को शूद्रों के समान समझा जाने लगा था। महिलाओं को जो सम्मान व आदर प्राचीनकाल में प्राप्त था। वह राजपूत काल में कम होता जा रहा था।[29] सल्तनत काल में मुसलमानों के प्रभाव के कारण यह प्रवृत्ति और भी ज्यादा बढ़ रही थी। क्योंकि हिन्दू समाज पर इस्लाम का प्रभाव पड़ा। हिन्दुओं में शिशु हत्या की प्रथा बढ़ती जा रही थी, हिन्दू समाज में पर्दा प्रथा भी प्रचलित हो गयी। स्त्रियाँ अपने घरों में एकान्तवास में रहने लगी। महिलाएँ पालकियों में बैठकर ही घर से बाहर जाती थी। उनकी स्थिति पहले की अपेक्षा निम्न होती जा रही थी। स्त्रियों को पुरुषों पर आश्रित रहना समाज की प्रमुख विशेषता बनती जा रही थी।

संदर्भ

1. जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार, 1974, पृ. 141
2. डॉ. राजकुमार, नारी शोषण : समस्याएँ एवं समाधान, दिल्ली, 2003, पृ. 1
3. बी.जी. गोखले, प्राचीन भारत इतिहास और संस्कृति, मद्रास, 1957, पृ. 126
4. डॉ. गजानन शर्मा, वही, पृ. 50–57
5. डॉ. एम.एम. लवानिया, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, जयपुर, 2004, पृ. 416
6. आर. शरण, भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का इतिहास, दिल्ली, 2002, पृ. 68–69
7. डॉ. एम.एम. लवानिया, पूर्वोक्त, पृ. 146–147
8. डॉ. गजानन शर्मा, वही, पृ. 65
9. जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार, 1974, पृ. 413
10. डॉ.एस.एल. नागोरी, पूर्वोक्त, पृ. 32
11. डॉ. गजानन शर्मा, वही, पृ. 80–81
12. डॉ. अर्चना बिश्नोई, रामायण में नारी, दिल्ली, 2002, पृ. 154–155
13. वही, पृ. 35
14. नेमिशरण मित्तल, प्राचीन समाचार, दिल्ली, 1988, पृ. 280
15. डॉ. राजकुमार, पूर्वोक्त, पृ. 8
16. अल्तेकर, पूर्वोक्त, पृ. 122–123
17. डॉ. वी.एस. भार्गव, प्राचीन भारत : इतिहास एवं विचार, दिल्ली, 1972, पृ. 65, आर. शरण, पूवोक्त, पृ. 85
18. वही, पृ. 65
19. जयशंकर मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 418
20. डॉ. राजकुमार, पूर्वोक्त, पृ. 11
21. प्रोफेसर भगवती प्रसाद पांथरी, मौर्य साम्राज्य का संस्कृति इतिहास, लखनऊ, 1972, पृ. 323
22. सत्यकेतु विद्यालंकार, मौर्य साम्राज्य का इतिहास, नई दिल्ली, 1976, पृ. 395
23. आर. शरण, पूर्वोक्त, पृ. 162
24. बी.एन. लूनिया, भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास, पृ. 207
25. डॉ. वी.एस. भार्गव पूर्वोक्त, पृ. 220–221
26. डॉ. विजय कुमार, पूर्वोक्त, पृ. 145
27. बी.एस. लूनिया, पूर्वोक्त, पृ. 301
28. अलबेरूनी, किताब– उलहिन्द, अनु. समाज, अलबेरूनीज इण्डिया, भाग–1, पृ. 155
29. बी.एस. लूनिया, पूर्वोक्त, पृ. 329